अंतरा-शब्दशक्ति

# हाँ मैं ऐसी ही हूँ..

(काव्य संग्रह)

नीरजा मेहता "कमलिनी"

# हाँ, मैं ऐसी ही हूँ

**(काव्य संग्रह)**


## नीरजा मेहता 'कमलिनी'



**अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन**

**इंदौर,मध्यप्रदेश**

**ISBN-** 978-81-937811-8-0

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
कार्यालयनेहरु चौक वारासिवनी १५ :,जिला बालाघाट ४८१३३१ (म.प्र)
शाखा२०७-एस :, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर ४५२००१ (.म.प्र)
दूरभाष९४२४७६५२५९ मो २५३१५९-०७६३३ (कार्या) :
अणुडाक -antrashabshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

**प्रथम संस्करण २०१८ © नीरजा मेहता 'कमलिनी'**
**मूल्य: ४०.००** रुपये
**आवरण चित्र :** संदीप सोनी, वारासिवनी
**मुद्रक**- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

**Ha Mein Esi hi Hun' by 'Neerja Mehta 'Kamlini'**

**वैधानिक चेतावनी** : इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है | लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुरुत्पार्दित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता हैं |प्रस्तृत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई हैं | अत :प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु प्रत्येक लेखक जिम्मेदार हैं| प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र ,भाषाशैली एवं स्थान सभी लखक की कल्पना हैं | किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं|

# हाँ, मैं ऐसी ही हूँ

प्रिय पाठकों,

जीवन का पथ जितना सुखद होता है उतना ही विकट भी और उस विकट मार्ग पर चलते हुए हमारा मार्ग अपने आप प्रशस्त हो जाता है। अधिकतर देखा गया है कि हम खुद से अधिक दूसरों के गुण दोष सरलता से देख लेते हैं और समझ भी लेते हैं किंतु स्वयं को जानना, समझना उतना ही दुष्कर लगता है। अपने लिए जो हमको लगता है असल में वो होता नहीं और जो हमको दिखता नहीं असल में हम वैसे ही होते हैं।

जब लोग मुझसे मेरे बारे में पूछते हैं तो मैं उलझ जाती हूँ, स्वयं को परिभाषित नहीं कर पाती हूँ। आश्चर्यचकित रह जाती हूँ कि मैं खुद को नहीं जानती और इसी उलझन ने मेरे अन्तस के कपाट खोले और मैं खुद में डूब गयी। मैं समझ गयी कि मेरी उलझन का निदान मुझमें ही छुपा है। मेरी पहचान मुझसे अभी तक सिर्फ बाह्य थी। खुद को टटोला, मैंने खुद से पलायन नहीं किया बल्कि सामना किया, अपने अंतस में डुबकी लगाई और वहाँ से कुछ अनमोल मोती खोज लाई जिसने मुझे नई दिशा दी, मेरी लेखनी का मार्ग प्रशस्त किया और आज खुद को परिभाषित करने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं हो रहा।

आज संतुष्ट हूँ कि मैं खुद को जान पाई हूँ, अपना अस्तित्व खोज लाई हूँ, अपने लिए समय निकाल पाई हूँ। आज गर्वित हूँ कि मैं अपनी ख़ामोश ज़ुबां से जंग जीत गयी हूँ जिसने मुझे निरुत्तर किया था और अब खुद के लिए कहने को मेरे पास शब्द हैं।

इस पुस्तक में मैंने कुछ कविताओं के माध्यम से स्वयं को परिभाषित किया है। मैंने अपने अंतस में झाँका तो पाया कि जीवन की कठिन परिस्थितियों को मैंने कितनी सरलता से अपनाया और सरल परिस्थियों को अपनाने में मैं शून्य हो गयी हूँ, और इस शून्य में भी मैं खुद को पूर्ण समझती हूँ। प्रिय पाठकों, अब फैसला आपके हाथ में है कि मैं कितनी सही हूँ और सच कहा जाये तो उन लोगों से मैं सहमत हूँ जो मुझे अंतर्मुखी समझते हैं क्योंकि जब मैंने खुद का आत्ममंथन किया तो पाया कि शायद हाँ, मैं ऐसी ही हूँ।

**आपके स्नेहिल आशीर्वाद की शुभाकांक्षिणी**
**नीरजा मेहता 'कमलिनी'**

# अनुक्रमणिका


| | |
|---|---|
| 1. हाँ, मैं ऐसी ही हूँ | 5 |
| 2. हाँ, मुझे खुद से है मुहब्बत | 6 |
| 3. हाँ, मैं शून्य सी पूर्ण हूँ | 7 |
| 4. हाँ, मैं स्वयं ही अपना अस्तित्व हूँ | 8 |
| 5. हाँ, मैं पुरुष से अलग हूँ | 9 |
| 6. हाँ, मैं जी लेती हूँ जीवन | 10 |
| 7. हाँ, मैं कैक्टस सी हूँ | 11 |
| 8. हाँ, मैं शांत झील सी हूँ | 12 |
| 9. हाँ, मैंने दिया है खुला आसमान | 13 |
| 10.हाँ, मैंने किया है आत्ममंथन | 14 |
| 11.हाँ, मुझे अच्छा लगता है | 15-16 |

# हाँ, मैं ऐसी ही हूँ

मेरी दुनिया कुछ अलग सी है
भाते हैं मुझे ग़म और तन्हाई
उसी में कहीं खो जाती हूँ मैं
खुद से खुद की बात करती हूँ मैं
खुद में खुद को खोजती हूँ मैं
कभी पूछ लेती हूँ खुद का हाल
कभी खुद से रूठ खुद को ही मना लेती हूँ
हाँ, मैं खुद अपनी सी अकेली हूँ।

जब लोग भेजते हैं संदेश
और करते हैं बातें मोबाइल पर
मुझे रहता है इंतज़ार डाकिये का
मुझे रहता है उस ख़त का इंतज़ार
जिसमें किसी अपने का संदेश हो
लम्बी-लम्बी बातें हों, कुछ प्रेम की सौगातें हों,
मुझे अच्छा लगता है बार-बार उस ख़त को पढ़ना
और दूसरे दिन फिर डाकिये का इंतज़ार करना,
शायद इसीलिए अपने छज्जे पर जाकर
रास्ते पर टकटकी लगाए बैठ जाती हूँ
हाँ, मैं खुद अपनी सी अकेली हूँ।

जब लोग नेट सर्फिंग में लगे होते हैं
मैं अपनी पुरानी गुड़िया निकाल
उसे दुल्हन की तरह सजाती हूँ
कच्ची पक्की रसोई बना कर
गुड्डे की बारात सजाती हूँ,
कभी गुट्टे निकाल अकेले ही खेल लेती हूँ
और रेडियो चला पुराने गीतों पर नाच लेती हूँ,
कभी अलमारी खोल पुरानी डायरी के पन्ने पलटती हूँ
और सहेज कर रखे
पुराने ख़तों की पोटली खोल लेती हूँ
हाँ, मैं खुद अपनी सी अकेली हूँ।

जब होता है मन उदास, मैं उस उदासी में
खुशी ढूँढ लेती हूँ, कुछ गुनगुना लेती हूँ,
पुराने संदूक से काजल की डिबिया, चुंदरी,
लाल चटक चूड़ी और टीका, नथनी
निकाल लेती हूँ और पहनकर
आईने के सामने मटक लेती हूँ,
छोटी चिड़ियों के बीच उनकी चीं चीं सुन
एकांत में भीड़ का सा एहसास कर लेती हूँ
हाँ, मैं खुद अपनी सी अकेली हूँ।

मैं एक कविता सी हूँ
जो पढ़ने में सरल पर गूढ़ अर्थ लिए होती है,
सब पढ़ना भी चाहते हैं पर समझ नहीं पाते,
मैं मीठी लोरी सी खुद को सुकून देती हूँ,
ओस की बूँद सी मन को नमी देती हूँ,
बंद पलकों से सब देख लेती हूँ
क्योंकि मैं कुछ अलग सी हूँ
मैं खुद अपनी सी अकेली हूँ
**हाँ, मैं ऐसी ही हूँ।**

# हाँ, मुझे खुद से है मुहब्बत

मैं स्वयं अपनी ही वैलेंटाइन हूँ
मुझे खुद से है मुहब्बत
अपनी ही तस्वीर मैं सजाती हूँ,
मन ही मन खुद से बात करती हूँ
खुद को सुनहरे स्वप्न मैं दिखाती हूँ,
कभी खुद से रूठ जाती हूँ
फिर खुद को ही मनाती हूँ,
शायद मैं अपनी ही अकेली हूँ
इसीलिए खुद से मुहब्बत करती हूँ।

नहीं चाहती खुद को देना ग़म
इसीलिए बहते अश्क़ों को
अपनी ही उँगली से थाम लेती हूँ,
इज़हारे इश्क़
जब करना हो चाँद से
ज़ुल्फ़ों को झटक
दर्पण में खुद को देख लेती हूँ,

दिल भी मेरा है, एहसास भी मेरे हैं,
ये अपनी ही धड़कनों को बता देती हूँ,
साँसों से प्यार का पैगाम दे
खुद से इज़हार कर लेती हूँ
और मन से मैं जुड़ गई हूँ
ये बात खुद को समझा देती हूँ,
**हाँ, मुझे खुद से है मुहब्बत**
**मैं स्वयं अपनी ही वैलेंटाइन हूँ।**

# हाँ, मैं शून्य सी पूर्ण हूँ

मैं शून्य हूँ,, गोल बिम्ब सी
उषा के सूर्य सी, निशा के चन्द्र सी,
आरब्ध हो या अन्त, मेरी अहमियत
व्योम से वसुंधरा तक
तिमिर से प्रकाश तक
सागर से क्षितिज तक
इहलोक से परलोक तक
समस्त ब्रह्मांड में
पूर्ण बिम्ब सी विस्तृत है,
ग्रहों के समान सब मेरे
इर्द गिर्द घूमते हैं
मुझे पाना चाहते हैं
क्योंकि जुड़ती हूँ तो
अभाव को पूर्ण करती हूँ,
न मैं बँट सकती हूँ, न मैं बढ़ सकती हूँ,
इस तरह मैं अन्यों के अस्तित्व को
अल्प नहीं करती,
परिस्थिति कैसी भी हो
मेरा अस्तित्व घट नहीं सकता,
मैं शून्य की संज्ञा से अभिधानित हूँ
आगे चलती हूँ तो पथ प्रदर्शक बन जाती हूँ
पीछे चलती हूँ  तो छाया बन जाती हूँ,
मैं शून्य हूँ फिर भी पूर्ण हूँ
**हाँ, मैं शून्य सी पूर्ण हूँ।**

# हाँ, मैं स्वयं ही अपना अस्तित्व हूँ

जब जरा अंतस में झाँकती हूँ
देख लेती हूँ अपना अस्तित्व
पा लेती हूँ अपना वजूद,
जब भी पिता, पति, बेटे में
अपना अस्तित्व खोजती हूँ
गुम हो जाती हूँ, भटकने लगती हूँ,
स्वयं में स्वयं का वजूद ढूँढती मैं,
जान जाती हूँ
मैं स्वयं ही अपना अस्तित्व हूँ।

जब भी मन में
नर्म एहसास पनपते हैं
एक शूल सा चुभ जाता है,
जो मुझे भूलने नहीं देता
कोमलता में छुपा
मेरी कठोरता का अस्तित्व
मैं समझ जाती हूँ मैं गुलाब के पौधे सी
कुसुम औ' कण्टक से युक्त हूँ।

जब कभी भरना चाहती हूँ उड़ान
समेटना चाहती हूँ गगन
मुझे नज़र आती है धरती,
जो भूलने नहीं देती
ज़मीं पर निखरा मेरा स्वरूप
मुझे एहसास हो जाता है
मेरा अस्तित्व दोनों पर समान है।

मेरे शांत मन में
जब उठती हैं लपटें
मुझे दीख जाता है
अपना अस्तित्व
मुझे लगने लगता है
मैं सिर्फ चाँदनी सी शीतल नहीं
सूरज सी आग भी बरसा सकती हूँ।

कभी-कभी मुझे मेरा अस्तित्व
दीए की बाती सा प्रतीत होता है,
मानों अंधकार में प्रकाश फैलाता
तेल की अंतिम बूँद तक
जलने के लिए आतुर
और बुझकर चहुँ ओर खुशबू फैलाता
उस धुएँ जैसा सबमें समाया है।

जब भी खुद को टाटोलती हूँ
मुझे एहसास होता है
मेरा अस्तित्व भीगी माटी सा है
सूखती आँखों में नमी दे जाता है
और शुष्क वृक्ष जैसी
काया में भी सुगंध दे जाता है,
क्योंकि मेरा अस्तित्व
मुझमें ही समाया है
क्योंकि मैं स्वयं ही अपना अस्तित्व हूँ
**हाँ, मैं स्वयं ही अपना अस्तित्व हूँ।**

# हाँ, मैं पुरुष से अलग हूँ

मैं नारी हूँ
पुरुष से कुछ अलग
पहचान रखती हूँ,
भले ही कोमल
दिखती हूँ
नाज़ुक और नर्म
दिखती हूँ
पर मेरा अंतस
शक्तिशाली है,
मैं पुरुष की तरह
कमज़ोर नहीं हूँ,
पीड़ा में, दुःख में
मैं शोर मचाकर
अपना कष्ट नहीं दिखाती,
मेरा मौन ही मेरी शक्ति है,
मेरे अल्फाज़
भले ही धीमे हों
भले ही उनमें
आवाज़ न हो
किन्तु उनमें वज़न है,
मैं वो नारी हूँ
जिसने शरीर की
सारी हड्डियों के टूटने से भी
अधिक दर्द सहन कर
जीवन दिया है
सृष्टि रची है
फिर भी उफ़ नहीं किया,
अत्याचारों की शिकार हुई हूँ
दुत्कारी भी गयी हूँ
पर आवाज़ नहीं की,
मैं पीड़ा में भी मुस्कराती हूँ,
अपना दर्द पी लेती हूँ
नहीं लाती माथे पर शिकन,
भले ही कोख से
जीवन के अंत तक
मुझे सदा दूसरा दर्ज़ा मिला,
फिर भी शोर मचाकर
अपना हक़ जतलाना
मेरी फितरत नहीं
मेरी पहचान है
और यही पहचान मुझे
पुरुष से बहुत अलग कर देती है,
और शायद इसीलिए
मैं पुरुष से अलग हूँ
**हाँ, मैं पुरुष से अलग हूँ।**

# हाँ, मैं जी लेती हूँ

नहीं चाह मुझे
रत्न जड़ित आभूषणों की,
नहीं कामना मुझे
सलमे सितारों से सजी चंदेरी चुनर की,
नहीं ईप्सा मुझे साज़ श्रृंगार की,
नहीं अभिलाषा मुझे
संगमरमर से बने महलों की।

मैं पैबंद लगी सूती धोती में रेशमी धागे से
कसीदे काढ़, संवार लेती हूँ वसन,
प्रियतम के प्रेम सिंदूर से
और लाज का गहना पहन
कपोलों पर सजा लेती हूँ लाली,
आँसुओं को बदल देती हूँ सुख वृष्टि में,
आनन्द और प्रसन्नता के पर्णों से
व भीनी माटी से शोभित कर लेती हूँ कुटिया
और रिक्त घड़ों में भर नीर
बदल लेती हूँ नियति।

मैं अल्प से भी चुन लेती हूँ विकल्प,
मैं अपर्याप्त में भी समेट लेती हूँ पर्याप्त,
मैं अपूर्ण को भी कर देती हूँ पूर्ण
और विकट परिस्थितियों में भी
मैं जी लेती हूँ जीवन
**हाँ, मैं जी लेती हूँ जीवन।**

# हाँ, मैं कैक्टस सी हूँ

मैं घर में सजे कैक्टस सी हूँ,
काँटों में भी जन्म देती हूँ फूल,
मरुभूमि में भी
रहती हूँ खिली-खिली,
इंडोर प्लांट सी
घर की शोभा बढ़ाती हूँ
हरियाली सी खुशियाँ फैलाती हूँ
नहीं माँगती प्यार की नमी
नहीं मुरझाती बिन मखमली ज़मीं,
स्वयं जी लेती हूँ बिन पोषक खाद के
और दे जाती हूँ खुद सा
हौसला व हिम्मत,
मैं सूरज की तेज़ धूप में भी
नही मुरझाती
मैं घने सर्द पाले में भी नहीं मरती,
न तेज़ हवा मुझे उखाड़ पाती है
और न बारिश मुझे बहा ले जाती है,
अपने जीवन से दे जाती हूँ संदेश
कण्टकों में भी सिखा देती हूँ मुस्कराना,
और विपरीत परिस्थितियों में भी
मैं जी लेती हूँ जीवन
क्योंकि मैं कैक्टस सी दृढ़ हूँ
इसीलिए सबकी प्रिय हूँ
**हाँ, मैं कैक्टस सी हूँ।**

# हाँ, मैं शांत झील सी हूँ

मैं शांत झील सी
कुछ कहती सी प्रतीत होती

वो चँहु ओर
प्रकृति का प्रतिबिम्ब समेटे,
मैं मन में भाव समेटे

वो बहावों को रोक
स्थिर सी दिखती,
मैं छलके अश्क़ों को
आँखों में रोक लेती

वो सागर नदिया से दूर
खुद में बहती,
मैं उसी झील के
निर्जन तट पर
एकांतवास में जीती

उसमें गिरती बूँदें
जल को बहाव देतीं,
मुझमें बीती यादें
मन को विस्तार देतीं

वो लघु, शीतल
भिन्न सौन्दर्य रखती,
मैं भावभीनी सी
नर्म एहसास रखती

वो झरने की
कोमल प्रेयसी सी,
मैं भावों में घिरी
कविताजीवी सी

न उसे व्योम सागर मिल
क्षितिज बनाने की चाह,
न मुझे कामना
मृगतृष्णा सी चाह

वो स्थिर शांत
एक प्रेरणा सी,
मैं धीर गंभीर
जीवन की परिभाषा सी

**हाँ, मैं शांत झील सी**
**कुछ कहती सी प्रतीत होती।**

# हाँ, मैंने दिया है खुला आसमान

मैं वो नारी हूँ
जिसने उम्र के ढलते पड़ाव में
बदला है अपना अस्तित्व,
मेरे पंखों ने लिया है विस्तार,
खुले आकाश में पतंग जैसी
इधर-उधर इठलाती हूँ,
हरे नीले लाल पीले रंगों में नहाई
सोलह श्रृंगार कर, विविध रूपों से सजी
घर की दहलीज की डोर से
बँधकर भी मैं स्वयं को मुक्त देखती हूँ।

मैं जानती हूँ ये डोर मेरी लक्ष्मण रेखा है,
मेरे चारों ओर व्याप्त
कठिनाईयों का सुरक्षा कवच है,
ये डोर मुझे मर्यादा का बोध कराती है,
मुझे शक्ति देती है, मुझे दृष्टि देती है।

आज कह सकती हूँ मैं वो नारी हूँ
जिसने खुले आकाश के नीचे विचरण किया,
मैं वो नारी हूँ जिसने नारी का
अस्तित्व बदलने का प्रयास किया है,
आज भले ही मेरे जीवन की
डोर टूट भी जाये
मुझे खुशी होगी मैंने भावी नारी के लिए
मार्ग प्रशस्त किये हैं और जीने के लिए
उनको दिया है खुला आसमान
**हाँ, मैंने दिया है खुला आसमान।**

# हाँ, मैंने किया है आत्ममंथन

आज जी उठी हूँ मैं
किया है मैंने आत्ममंथन
अनेक वृत्तियोँ भावों का
गहनता से किया है विचार
स्वयं के शब्दों में
स्वयं की, की है तलाश
काल्पनिकता से परे
यथार्थ के धरातल पर
पलायन नहीं, सामना किया है
पर ये इतना सरल न था।

अपने अंदर के विष को समझना
आत्मविश्लेषण करना
कितना कठिन था।
सुना है मंथन के बाद
पहले विष निकलता है
फिर अमृत।
आज किया है मैंने
स्वयं का कायाकल्प
निकाल फेंका है
अपने अंदर का विष
और किया है सुधापान।

स्वयं को रिक्त नहीं
बोझमुक्त महसूस कर रही हूँ
धरती से ऊपर उठ खुद को
साधारण मानव से बढ़कर
देवत्व रूप में देख रही हूँ
क्योंकि मैंने किया है आत्ममंथन
**हाँ, मैंने किया है आत्ममंथन।**

# हाँ,मुझे अच्छा लगता है

**मेरे प्रियतम !**

तुम्हारे प्यार से खुद को सजाना
मुझे अच्छा लगता है,
सुहाग की निशानियों से
अपना प्यार जतलाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारी समृद्धि के लिए
भवों के बीच
कुमकुम की बिंदी लगाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारे प्यार को दर्शाती
हाथों में मेहंदी का
गहरा लाल रंग रचाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारी लंबी उम्र के लिए
और प्रेम की मर्यादा
बनाये रखने के लिए
मांग में सिंदूर सजाना
और मांग टीका लगाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारी मान मर्यादा
की रक्षा के लिये
नाक में नथ पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारी बुराई
अपने कानों में न पड़ने दूँ
कान की कच्ची न पड़ जाऊँ
इसलिए मुझे अपने कानों पर
कर्णफूल सजाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हें दिए वचनों
का मान रखने के लिये
मंगलसूत्र पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारे धन और स्वास्थ्य
की रक्षा के लिए
बाजूबंद पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारे प्यार और विश्वास
को बढ़ाने के लिए
अंगुली में मुंदरी पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारी परम्परा का
निर्वाह करने के लिए
कांच की चूडियाँ
और कंगन पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हें आकर्षित
करने के लिए
कमरबंद पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

अपनी आहट से
तुमको जगाने के लिए
पायल पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

सबकी नज़र बचाकर
बिछुए में लगे शीशे
में तुम्हें देखना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारे प्यार की खुशबू लिए
हरसिंगार के फूलों की
वेणी पहनना
मुझे अच्छा लगता है।

अपने नयनों में बसाई
तुम्हारी मूरत को
बुरी नज़र से बचाने के लिए
काजल लगाना
मुझे अच्छा लगता है।

तुम्हारे घर पर
अपना अधिकार
दिखाने के लिए
पांव से आलते की
छाप लगाना
मुझे अच्छा लगता है।

लाल जोड़ा पहनकर
तुम्हारे प्यार की
चुनरी ओढ़कर
तुम्हारे करीब आना
मुझे अच्छा लगता है।

मेरे प्रियतम !
तुम्हारी दुल्हन के ये
सोलह श्रृंगार
सब तुम्हारे लिए हैं,

जानते हो
आईने में खुद की छवि में
तुम्हारी छवि देखकर शरमाना
मुझे अच्छा लगता है।

**हाँ, मुझे अच्छा लगता है।**

# व्यक्तित्व दर्पण

| | |
|---|---|
| नाम | - नीरजा मेहता 'कमलिनी' |
| जन्मतिथि | - 24 दिसम्बर 1956 |
| शैक्षिक योग्यता | - एम.ए. (हिन्दी व संस्कृत), बी.एड., एल.एल.बी. |
| निवास स्थान | - कौशम्बी गाज़ियाबाद (यू.पी.) |
| फोन नं. | - 9654258770 |
| मेल आई.डी. | - mehta.neerja24@gmail.com |
| विधा | - छंदमुक्त, गीत, मुक्तक, हाइकू, कहानी, लघुकथा, संस्मरण, लेख आदि |
| प्रकाशित एकल पुस्तकें | (1) मन दर्पण (कविताएँ समीक्षा सहित) 2016<br>(2) नीरजा का आत्ममंथन (काव्य संग्रह) 2016<br>(3) उमंग (बाल काव्य संग्रह) 2017<br>(4) परछाइयाँ (संस्मरण) 2017<br>(5) सृजन समीक्षा (कविताएँ समीक्षा सहित) 2018<br>(6) ओस सी ज़िन्दगी (काव्य संग्रह) 2018<br>(7) खनक चूड़ियों की (काव्य संग्रह) 2018<br>(8) काश तुम समझ पाते<br>(9) एक टुकड़ा धूप |
| प्रकाशित साक्षा संग्रह | (1) 35 साझा काव्य संग्रह (2) 4 साझा कहानी संग्रह (3) 2 साझा लघु कथा संग्रह (4) 1 साझा लेख संग्रह (5) 1 साझा समीक्षा संग्रह (6) 2 परिचय संग्रह |
| पत्र पत्रिकाएं | - 2008 से अब तक देश विदेश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं व ई-पत्रिकाओं में लगभग 500 से अधिक रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं और निरन्तर प्रकाशित होती रहती है। |
| सम्मान | - साहित्य के क्षेत्र में योगदान के लिए विभिन्न संस्थाओं/समूहों द्वारा 2015 से अब तक लगभग 50 बार प्रशस्ति पत्र व स्मृति चिन्ह से सम्मानित। |
| जीवन का उद्देश्य | - कड़ी मेहनत, सच्ची लगन औन अनुशासन ही मेरी पूँजी है, साहित्य सेवा ही मेरा सपना है और सादगी ही मेरा जीवन है। |

न छीन पाआगे कभी, बेवजह ये पहल है
ये ईंटों का नहीं, मेरे ख़्वाबों का महल है।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-81-937811-8-0

मूल्य- 40/-